Chap-6

अध्याय छह

जीवन दर्शन और आध्यात्म चिन्तन

आधुनिक कवियों में डॉ0 रामेश्वर लाल खण्डेलवाल 'तरुण' जीवन–दर्शन और आध्यात्म चिन्तन की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण रहे है। किसी भी महाकवि का दर्शन और चिन्तन–जीवन मूल्य, आदर्श, नैतिक दृष्टिकोण, आत्मा, परमात्मा, बह्म, मोक्ष, परम सत्य आदि सर्वाधिक महत्त्व के होते है। सूर, तुलसी, कबीर, जायसी, मीरा, रैदास, नानक आदि अपने दार्शनिक चिन्तन के कारण ही महाकवि हैं। आधुनिक हिन्दी कवियों में प्रसाद, महादेवी, निराला, पन्त आदि के रचना–संसार बाह्य रंगरूप ही नहीं निसर्ग और चिन्तन–सौन्दर्य को स्थूल प्रतिक्रियाओ से उठाकर आध्यात्मिक दीप्ति प्रदान की है। इसी प्रकार कवि 'तरुण' का चिन्तन पक्ष विचारणीय है। उनकी सर्जना में सास्कृतिक आस्था, मानवता के प्रति निष्ठा, धर्म, आत्मा–परमात्मा, बह्म आदि के बौद्धिक चिन्तन पक्ष पर भी विचार करना आवश्यक है। यों तो मानव–जीवन और प्रकृति का व्यवस्थित और सूक्ष्म चिन्तन अपनी परिणति में दार्शनिक हो ही जाता है। जीवन में मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि भी 'दर्शन' के अन्तर्गत आती है। मानव, समाज, प्रकृति और किसी अतिन्द्रिय सत्ता की आराधना में 'दर्शन' की व्यापकता दिखती है, यह स्वय सिद्ध है। कवि 'तरुण' ने अपनी अनेक रचनाओ में मानव–समाज, व्यक्ति, प्रकृति, सौन्दर्य, साहित्य, कला, धर्म, राजनीति, सस्कृति, विज्ञान तथा अपने जीवन–मूल्यो– सभी विषयों पर यथास्थान सूक्ष्म–गहन चिन्तन का भरपूर प्रमाण दिया है। यही कवि 'तरुण' का चिन्तन या जीवन दर्शन है। उसकी पर छोटी सी गुजारिश है–

"नन्हें से प्राणों को मेरे
एक चाह रहती बस घेरे–
खुलती हुई देख लेता मैं
मानव की आत्मा की कारा!
इस विशाल जीवन–अम्बर के–
नीरव, विस्मृत, उपकूलों का
रश्मि–मुखर मैं मौन सितारा!" [1]

'वसन्त– प्रभात' शीर्षक कविता की ये रहस्यवादी पक्तियॉ देखिए–

"सुधासिक्त करने को कण–कण, हृदयों में भरने नव–जीवन
जरा–मरण–भय–क्लान्त मनुज का, लेने को मधुमय आलिंगन–
फूट सुनहली रवि–किरणों में, किसका प्यार उमड़ आया रे!
जी करता है, आज कठिनतर तोड़–फोड़ लोहे का पिंजर–
उड़ जाऊँ उन्मुक्त गगन में मैं स्वतन्त्र पक्षी बन द्रुततर!
कैद रहूँ कब तक सीमा में? मैं असीम पथ का आया रे!
आज आत्म–स्वातन्त्र्य भावना जगा उठी मन में लेकर बल,
हृदय हो रहा मुक्त तरंगित, सस्वर गिरि–निर्झर सा चंचल।
मैं प्रकाश का अमर पुत्र! हा, बन्दी बन कर जीना क्या रे!
नव प्रभात आया, आया रे!" [2]

कवि 'तरुण' नैतिक मूल्यों में विश्वास रखता है। कवि कल्याण मार्ग का पथिक है जो नैतिक मूल्यो के आधार, अभ्यास, प्रसार–प्रचार द्वारा ही सक्षम या प्राप्य है। रस, भावना, संवेदना, कल्पना, अनुभूति, सौन्दर्य–भावना आदि से कवि 'तरुण' ने अपने समस्त दीर्घकालीन सर्जन में मानवीय मूल्यों और नैतिकता का उदघोष किया है। उनके काव्य में जीवन–मूल्यों की तलाश के क्रम में यह

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'मैं–मौन मुखर', पृष्ठ 382
2 वही, 'वसन्त प्रभात', पृष्ठ 190–191

तथ्य सजग पाठक पर भली–भाँति उजागर हो जाता है। मानव–कल्याणकारी रूप पर जोर देता हुआ कवि कहता है–

"करुणा, स्नेह, त्याग, सेवा की सहज निभाते रीत–
इसी व्योम के तले, प्रेममय गृह के बीच पुनीत
मानव को इस वसुधा पर ही मिल जायेगी मुक्ति।

* * * * * * *

जीवन में मन, वचन, कर्म का यदि हो गया समन्वय–
मुक्ति और बन्धन फिर क्या रे, कैसा जन्म–मरण भय!
सहज साधना मुझको प्रिय है, मानव–धर्म अभीसिप्त।
इस पथ पर ही मिल जायेगा मुझको तो मधुरामृत।" [1]

'जीवन दो' शीर्षक गीत में कवि ने अपने लिए लहरों, तारों, विहगो, सुमनों के जीवन की याचना की है–

"तारों का जीवन दो!
गहन तिमिर में खोल किरण पर
हम प्रकाश–शिशु उड़े मुक्त स्वर,
द्युति–स्मिति से निज पथ उदीपीत कर
वितरें ज्योति गगन को!
तारों का जीवन दो!" [2]

'मैं बनवासी होता' गीत में कवि की स्वच्छन्दता और स्वातन्त्र्य–कामना अत्यन्त जीवन्त रूप में व्यक्त हुई है।

'तरुण' ने प्रकृति के सानिध्य में मुक्त और संघर्षमय जीवन जीकर अदम्य जीवट का प्रमाण प्रस्तुत करने वाले दीपक, विहग, पथिक, मॉझी पर सर्वाधिक गीत लिखे है। प्रकृति के प्रति ऐसा प्रगाढ़ रागात्मक, दार्शनिक और आध्यात्मिक सम्बन्ध कविवर 'तरुण' की विरल उपलब्धि है। प्रकृति–परिधि अपने रूप, रस, गन्ध से भरे विस्तार और उल्लास के साथ कवि–मन में कन्द्रित हो गई है और कवि का मानस–केन्द्र अपनी समूची भाव सम्पदा के साथ प्रकृति–परिधि में व्याप्त हो गया है। अद्वैत मे तो फिर भी दो के एकाकार होने का बोध होता है, किन्तु यह स्थिति को अद्वैत से भी कुछ आगे की हैं जहॉ कवि पूर्णतः प्रकृतिमय हो जाना चाहता है और किसी डाली पर स्वयं को फूलता–फलता देखने का अभिलाषी है–

"किसी विजन की मृदुल डाल पर चलकर फूलें और फलें,
चलो हृदय, इस निर्मम जग से दूर कहीं कुछ देर चलें।" [3]

यह उल्लेखनीय है कि 'तरुण' के गीतों में प्रकृति के सान्निध्य में उन्मुक्त जीवन जीने की लालसा की अभिव्यक्ति प्रकृति के दो महत् या विराट रूपों– समुद्र तथा आकाश– के सन्दर्भ मे सर्वाधिक प्रभावशाली ढग से हुई है। 'गाता चल तू गीत', 'मॉझी, साहस छोड ने देना', 'ओ चट्टान से मल्लाह' आदि गीतों में कवि स्वय माझी के साथ तदाकार होकर समुद्र की लहरों से जूझने में जीवन–रस की गहनतम अनुभूति करता प्रतीत होता है। 'तुफानी जीवन–सागर में' शीर्षक गीत मे कवि ने अपनी प्रियतमा के साथ समुद्र में तैरने का प्रस्ताव प्रस्तुत करके प्रकारान्तर से समुद्र के प्रति अपनी निहित आसक्ति को वाणी दी है। 'हम तुम कहीं चल दें' गीत में कवि ने अपनी प्रियतमा के साथ में चॉदनी रात में नौका–विहार का अत्यन्त मोहक प्रस्ताव रखता है कि मरण की भूमि को छोड क्षितिज के पार

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'मुक्ति', पृष्ठ 267
2 वही, जीवन दो', पृष्ठ 353
3 वही, 'मुक्ति की ओर', पृष्ठ 274

जाया जाये–

"दूध–जैसी चाँदनी में एक नन्ही नाव पर–
हम–तुम, कहीं चल दें!
नाव बढ़ती हो थिरकती, हँस रहे हो चाँद–तारे,
जल–लहरियों पर जड़े हो, मोतिया सलमें–सितारे,
यह मरण की भूमि तज, सीमित क्षितिज को पार कर–
हम तुम कहीं चल दें!" [1]

गीतकार डॉ0 'तरुण' की मुक्ति चेतना की सबसे अधिक समर्थ अभिव्यक्ति आकाश के सन्दर्भ में हुई है। कवि के लिए आकाश केवल आकाश नही है, वरन् वह उसकी मुक्ति–चेतना का मुक्त विस्तार है, उसका जीवनोल्लास और जीवन–दर्शन है। अपनी आकाश–निष्ठा को रेखांकित करते हुए 'तरुण' ने लिखा है–

"पाँव तले की भूमि छीन लो, पर मन का विश्वास न छीनों
झँझाओं में नीड़ उड़ा दो, पर मेरा आकाश न छीनों।" [2]

जिस प्रकार कवि माँझी के साथ एकाकार होकर समुद्र की उताल तरगों से जूझते हुए चरम तृप्ति का अनुभव करता है, उसी प्रकार, वरन् उससे भी कहीं अधिक, वह विहग के साथ तदाकार होकर आकाश की ऊँचाइयों मे मुक्त उडान भरने में विशेष उल्लसित होता है। धरा के बन्धनों के उद्देश्य से, काले बादलो में उडान भरती चिड़िया के साथ आकाश में उडान भरने से को आतुर हो–उठता है–

"बन्धनों की इस धरा पर
हाय, बन्दी गान मेरे,
साँस पर रक्खी शिलाएँ,
छटपटाते प्राण में!
मुक्त नभ में मुक्त पाँखें खोलती चिड़िया,
हाय, जलते प्राण में रस घोलती चिड़िया,
मुझे भी साथ लेती जा!" [3]

कवि की आकाश–प्रियता को धरती के दुःख–दर्द के ठेकेदार जनवादी या अ–जनवादी समीक्षक पलायन की प्रवृति का पर्याय मान सकते है, किन्तु वास्तविकता इसके सर्वथा विपरीत है। जिस प्रकार समुद्र जीवन–संघर्ष का प्रतीक है, उसी प्रकार आकाश उमग, प्रकाश, विकास और मुक्ति का प्रतीक है। कवि ने प्रकाश को 'आकाश का समुद्र' कहकर दो महदाकारों का अद्वैत स्थापित किया है–

"आषाढ़ मेघ–माल की उमंग ले,
प्रकाश के समुद्र की तरंग ले,
प्रभात के समस्त रूप–रंग ले,
सुडौल शक्तिवान् अंग–अंग ले,
अरे अथाह पी प्रकाश–माधुरी,

---

1 'आँधी और चाँदनी' 'हम तुम कही चल दें', पृष्ठ 103
2 वही, 'मुक्तक', पृष्ठ 95
3 वही, 'दूर–काले बादलो में', पृष्ठ 101

असीम मुक्ति–बीच लहलहा यहाँ।
मुझे बुला रहा गगन–" [1]

डॉ0 'तरुण' को जिस प्रकार आकाश, प्रकाश, विकास आदि का सागर प्रतीत होता है, उसी प्रकार जल–थल में अपनी मोहमाया फैलाने वाला परमात्मा भी मधु, प्रकाश और सुषमा का सागर प्रतीत होता है–

"अरे कौन है वह चिर–सुन्दर?
मधु, प्रकाश सुषमा का सागर।" [2]

ईश–प्रेम और भक्ति–भावना से आपूरित गीतो मे कवि अपनी हीनता और दैन्य को प्रभु के प्रति निवेदित करके स्वयं को उनके चरणो में समर्पित करता है। प्रभु के ध्यान से उसकी आत्मा मे परमानन्द का उदय होता है और अमर–ज्योति लहराने लगती है। कवि अपने मन को सन्देश देता है–

"पद–वन्दन कर रघुनन्दन के, छोड सकल छल–छन्द अरे,
परमानन्द प्रकट हो जावें, ज्योति अमर लहरावे रे!" [3]

संयोग के मधुर प्रसंगों से सम्बद्ध गीतों में रूपासक्ति, मिलनोल्लास, आत्मिक विनिमय, प्रेम–प्रगाढता और भावात्मक अद्वैतावस्था के चित्रण में तरुण को विशेष सफलता मिली है। 'तुम मेरे साथी होते तो', 'हम तुम कही चल दें', 'पा प्यार तुम्हारा ही रानी', 'जब गाया ध्यान तुम्हारा घर', 'सुकुमारि उठाओ अवगुण्ठन', 'फूल खिले बेला के' आदि अमर गीतों में तरुण भाव–समाधि की चरमावस्था तक पहुँच गये है। भाव–विह्वलता, आत्म–समर्पण, प्रणय–निवेदन, रूपासक्ति, प्रेमोष्मा की प्रगाढता की दृष्टि से ये गीत अप्रतिम है। 'तुम मेरे साथी होते तो' गीत की निम्नलिखित पंक्तियो में प्रियतमा के सानिध्य–सुख और पावन प्रभात की पराकाष्ठा निरूपित हुई है–

"तुमको पाकर, हे मधुर हृदय!
मुझको न मरण का होता भय!
दु:ख की रातों का अंधियारा नयनों का अंजन हो जाता!
तुम मेरे साथी होते तो–
जीवन होता संगीत महा,
धरती पर आता स्वर्ग बहा!
भव–तीर्थ तुम्हारे साथ नहा, यह जीवन पावन हो जाता!
तुम मेरे साथी होते तो–" [4]

आत्मा और परमात्मा का एकत्त्व इन पक्तियों मे देखने योग्य है–

"किससे बालो किसका परिचय?
हम सब आत्मा में चिर–परिचित, सब एक, देह का केवल द्वय!
सब एक ज्योति से ज्योतित हम,
नक्षत्र अमर चिर उज्ज्वलतम,
बाहर से लाखों, पर सबकी है गोद– एक ही नील निलय!
किससे बालो किसका परिचय?" [5]

---

1 'आँधी और चाँदनी' 'आकाश का निमन्त्रण', पृष्ठ 77.
2 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'वसन्त प्रभात, पृष्ठ 192
3 वही, 'हरि चरणामृत पी ले रे, मनवा', पृष्ठ 229
4 वही, 'तुम मेरे साथी होते तो–', पृष्ठ 284
5 वही, 'परिचय', पृष्ठ 269

'वंदना' शीर्षक कविता में कवि याचना करता है–

"मंगलमय उच्चादर्शों में
रहे अटल विश्वास हमारा,
देव, तुम्हारी सृष्टि मनोहर
बने नहीं मानव की कारा!
नष्ट–भ्रष्ट हो जीवन के सब–
निष्ठुर छल, भ्रम, भय संशय हे!
ज्योतिर्मय हे।" [1]

कविवर 'तरुण' इन कविताओं के माध्यम से उस भाव–भूमि की सृष्टि करना चाहते हैं जहाँ सभी प्राणी बिना किसी भेद–भाव के एकत्व का अनुभव कर सकें। जहाँ मानसिक शान्ति की गंगा बहती रहती है और जहाँ अपने में ही अपने को पाया जा सकता है–

"एक बूर बस ऐसा गा लूँ–
अपने में अपने को पा लूँ।" [2]

कवि 'तरुण' का काव्य उदात जीवन–दर्शन और उच्च भावभूमि से भरपूर है। कवि ने जिस संत्रास को भोगा है, उसी को सवेदना के स्तर पर अभिव्यक्त किया है। भारतीय जीवन–मूल्यो– उदारता, समानता, सत्य, त्याग, समर्पण, प्रेम, अहिंसा, सहिष्णुता आदि की जिस कुशलता से प्रतिष्ठा की गई है, उसी के कारण कविवर 'तरुण' राष्ट्रीय स्तर के कवि बन गए हैं। वास्तव में कविवर 'तरुण' वैश्विक चेतना के कवि है। उनके सम्पूर्ण काव्य मे स्वस्थ, सबल और सुन्दर विश्व की निर्माण–परिकल्पना का जो स्वप्न सँजोया गया है, उसी को साकार करना कवि की काव्य–साधना का लक्ष्य है। वे ऐसे नव–मानव की रचना करना चाहते हैं जो जडाऊ, तामझामी विराट् आकाश का प्रतिनिधि न होकर सोधी, सजल उपजाऊ माटी की सुगन्ध का प्रतिनिधि हो–

"हम तो हैं प्रतिनिधि–
नाजुक, विश्वासमयी, भीनी–भीनी महकती
शीतल दूब के:
सरल, अल्हड़, लय–प्राण मुक्त लहर के,
सोंधी–सजल उपजाऊ माटी की सु–वास के!
हम नहीं हैं प्रतिनिधि–
जड़ाऊ, खोखले, तामझामी विराट् आकाश के!" [3]

मानव और समाज– इन दोनों शब्दो को छोड़कर तो 'तरुण' काव्य की परिकल्पना ही नहीं की जा सकती–

"हे मानव! अपना यह जग है आनन्द धाम!
यह चिर मंगल उद्देश्यमयी रचना ललाम,
यह प्रभु की सार्थक सृष्टि, न इसका मान घटा,
यह सृष्टि सफल हो– तू भी अपना हाथ बँटा,
यह मर्त्य जगत यदि हो जावे मधुमय सरोज–

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'वन्दना', पृष्ठ 271
2 वही, 'मुझ को एकाकी गाने दो', पृष्ठ 143
3 'हम शिल्पी सत्रास के' 'प्रतिनिधि', पृष्ठ 81

तो किसी स्वर्ग की नहीं रहेगी तुझे खोज!" [1]

वास्तव मे कविवर 'तरुण' का स्वप्न है– एक स्वस्थ, सबल विश्व–समाज की रचना जिसकी परिणति वह अपने इस नायक नवमानव के माध्यम से कराना चाहता है–

"मेरे मन में तो आज अटल विश्वास भरा!
ज्वाला में जलकर मानव है हो रहा खरा!
यह विश्व में अन्त में होगा सुन्दर, हरा–भरा,
मंगल गायेगी युग–युग तक यह वसुन्धरा!
धरती का सुन्दर जोड़ा – यह प्रिय नारी नर–
कर देगा मानव–सृष्टि सफल, संयत, सुन्दर!" [2]

जिस कवि के काव्य का नायक स्वय मानव हो– चिर सुन्दर, चिर नवीन, अमृत पुत्र। जिस कवि का सम्पूर्ण काव्य मानव की ही मगल कामना से स्पदित हो रहा हो, ऐसा काव्य – और उस युग मे जिसमे आम आदमी और साधारण आदमी का गौरव–गान करने से हम थकते नही– आज के हमारे युग मानव–युग– की चेतना की मॉग की पूरी तुष्टि करता है।

कवि की दृष्टि मे यह जगत् गुलाब की डाली है जिसमें अगणित शूलो के साथ–साथ पत्र, कोपल, कलियॉ और सौरभपूर्ण पुष्प भी है। अत मनुष्य को चाहिये कि वह कॉटो मे बिधते हुए भी सौरभ की खोज करे, विपन्नो और दुखियों के लिए संजीवनी प्राप्त करे। उसके लिए जीवन ईश्वर का दिया गया वरदान है, जिसमें कर्म द्वारा धरती को स्वर्ग बनाया जा सकता है। यह दु:खी जग अस्तित्व की माग करता है। अत त्याग और बलिदान द्वारा सुर्खरू हुआ जा सकता है–

"यह मधुर आलोक . फूटा, ब्रह्म का सब तेज फूटा!
चहचहाते पंछियों की टोलियाँ तुझको जगातीं!
जग गया कण–कण प्रकृति का, तू अभी तक सो रहा रे,
क्यों पड़ी है ज्योति–वंचित, आह, तेरी दीप–बाती!" [3]

अस्त होने या मर मिटने से वह नही घबराता क्योकि वह अन्य आस्थावान् कवियो के सदृश मृत्यु को जीवन का बीज मानता है–

" मिट जाना ही तो जीवन है,
मरण सृष्टि का प्रथम चरण है,
अरे अमर, तू मर न सकेगा बीज रूप बन, धरती में गल," [4]

कभी–कभी वह सौम्य–पथ छोडकर उग्र पथ अपनाने का उदबोधन देता है, क्योकि उसने अनुभव किया है कि रोने से दु:ख दूर नहीं होता, ऑसू से पत्थर चूर नही होते, कोमल–करुण रागिनी से पग की बेडियॉ नहीं टूटती।

महादेवी के समान उनकी पीडा का दर्शन उदात भाव–भूमि पर अधिष्ठित है। 'तरुण' मानते है कि पीडा जलाकर भी शीतलता प्रदान करती है, अन्त करण को शुद्ध करती है, वह प्रभु का मधुमय उपहार है–

"यदि मैं अन्तर की पीड़ा का यह मधुमय उपहार न पाता,
तो मार्मिक आघातों से वंचित हो तार मृतक रह जाता,

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'नया जीवन–नया समाज', पृष्ठ 165
2 वही, पृष्ठ 165
3 वही, 'उद्‌बोधन, पृष्ठ 65
4 वही, 'तू अपने पथ पर बढता चल', पृष्ठ 74

तुमने प्राण झनझना मेरे, मुझको मन्जुल गान दे दिया!" [1]

जिस प्रकार प्रसाद के हृदय मे सतत् विश्व–वेदना–बाला का निवास है, वह निरन्तर जलती रहती है, व्यथित विश्व–पतझड मे बसन्त का अवतरण करती है, उसी प्रकार 'तरुण' का विश्वास है कि कवि विश्व–वेदना मे तपकर ही धरती पर स्वर्ग बसाता है–

"तप विश्व–वेदना में निशि–दिन
जीवन का स्वर कवि गाता है,
सुन्दरता का ले स्वप्न मधुर,
धरती पर स्वर्ग बसाता है।" [2]

सुख–दुख के सम्बन्ध में 'तरुण' के विचार पत और प्रसाद के विचार जैसे ही है। वस्तुत. इनके लिए वे प्राचीन भारतीय दर्शन, विशेषत. उपनिषदो और गीता मे प्रतिपादित विचारों के ऋणी है। सुख–दुख से ऊपर उठकर समभाव में ही अनन्त शान्ति है। प्रकृति से उदाहरण देते हुए 'तरुण' बताते है कि सम शीत'ताप मे ही बसन्त मुस्काता है, जीवन की खेती पकती है। अतः यद्यपि दुःख के पर्वत की तुलना में सुख राई के समान है, पर उसी दु:ख–सागर में मोती मिलते है–

"दुःख–सागर में भी मिलते हैं
जीवन के चमकीले मोती।" [3]

प्रसाद के समान 'तरुण' नियति को सृष्टि की संचालिका शक्ति और मनुष्य को उसके हाथों का क्रीड़ा–कन्दुक मानते है–

"मनुज एक क्रीड़ा–कन्दुक विधि ने है जिसे उछाला,
इन्द्रजाल–सा फैल रहा है यह संसार निराला।" [4]

कवि 'तरुण' जीवन को भीषण रण मानते है, जहॉ पग–पग पर आसूँ पीना पडता है, हलाहल के घूँट निगलने पड़ते है, हृदय पर डंक सहने होते है यह जीवन अलियो का गान नहीं है, यहॉ क्षण–भर में स्वप्नों के सतखंडे रंग–भवन चकनाचूर हो जाते हैं यहॉ विश्राम मरण है और संघर्ष द्वारा ही प्रगति की जा सकती है, कोरी भावुकता से यहॉ काम नही चल सकता–

"परिवर्तन के प्रबल चक्र में विश्व दौड़ता जाता,
आज धूल में खिला फूल कल पुनः धूल बन जाता,
बनते हैं साम्राज्य यहाँ रज से उठ रज में मिलने," [5]

तथापि उसकी सार्थकता प्यार की खेती बोने में हैं, कोमल भावों और व्यवहार द्वारा अणुबम से जलते जग का शीतल उपचार करने में हैं, क्योंकि मधुर प्रेम का अमर स्पर्श ही लघु रजकण को आभावान कनक में बदल देता है।

एक स्थल पर वे मानव को नियति की प्रत्यचा पर चढा बाण कहते है। फिर भी वह कहीं भी हताश, अकर्मण्य और पगु बनने की बात नही करते–

"प्रतिपल है निष्ठुर नियति यहाँ,
कर रही प्राणियों से क्रीड़ा,

---

1 तरुण–काव्य ग्रन्थावली 'दान', पृष्ठ 60
2 वही, अमर टेक, पृष्ठ 263
3 वही 'सुख–दुख', पृष्ठ 116
4 वही 'संसार' पृष्ठ 113
5 वही पृष्ठ 114

मैं खोज रहा फिर भी इसमें
मानव आत्मा का शाश्वत धन!" [1]

मृत्यु–बोध और उसकी गहराती छाया से वह परिचित हैं–

"मुझ लहकते तरुण अंगार को
एक दिन मरण–अंधार में
डूबों जायेंगे–" [2]

मानव को असहाय, दीन एव निरवलम्ब बताते हुए उसकी तुलना तारो में उलझी कटी–फटी पतंग के अदना धागे से करते हैं अथवा उस फूल, नक्षत्र, दीपक और बुलबुले से, जो क्षण–भर अपनी सत्ता का आभास दे अनन्त मे विलीन हो जाता है और जिसके अस्तित्व विहीन होने से जगत् का कुछ बनता–बिगडता नहीं है, पर साथ ही वह आस्थावादी–अस्तित्ववादियों के सदृश मानव को चिर प्रकाश की अमर–किरण मान मृत्यु को ललकारते भी हैं–

"जीवन लूँगा मैं तो आँधी, नदी या तूफान–सा
जिसमें तड़फन हो, ज्वाला हो, गुंजन, मेघ–मलार हो।" [3]

'तरुण' की सुस्पष्ट धारणा है कि कवि का कर्तव्य है कि वह अपनी वाणी से मर्त्य जगत् में संतप्त प्राणियों को आश्वस्त करे, रस का स्रोत प्रवाहित करे, फूलो की तरह स्वय कॉटों से बिंध मधु का विस्तार करे। ऐसा कर सकने के लिए यह आवश्यक है कि कवि में आस्था हो, वह निराशावादी न होकर आशावादी हो और कवि 'तरुण' के काव्य में आस्था तथा आशा के स्वर अत्यन्त मुखर हैं। उनकी आस्तिक भावना तथा जीवन के प्रति आस्था का स्वर निम्न पंक्तियो में देखिए–

"सब तोड़ लकीरें मौगोलिक–
मनव, निज ज्योति लिये मौलिक–
स्वच्छन्द सितारों–से झलमल, सह–गान धरा पर गायेंगें!" [4]

उनका संकल्प दृढ है, संघर्ष को झेलने की अपार शक्ति और उसमें विजय पाने का अदम्य विश्वास भी उनके काव्य मे जगह–जगह मिलता है–

"मैं और मानूँ हार?
मौत के जबड़े पकड़ कर
खींच उसके दाँत सारे,
जिन्दगी का अर्क पीने को खड़ा तैयार!" [5]

मानव–मंगल एव विश्व–कल्याण की भावना उनके रोम–रोम मे समायी है। इसके लिए वह आवश्यक मानते है कि मानव का मन उदार और उदात्त बने और इस कार्य मे कवि की भूमिका महत्त्वपूर्ण है–

"सूरजमुखी कमल–सी मन की पंखुड़ियाँ फैला–
हँस लो चार घड़ी, जीवन का लगा मधुर मेला;
उल्लास सभी का है।" [6]

---

1 तरुण–काव्य ग्रन्थावली' खोज, पृष्ठ 255
2 'आँधी और चाँदनी 'बुझूँगा, मैं अँगार पृष्ठ 48
3 वही जीवन तीन स्थितियाँ पृष्ठ 29
4 वही, 'युग आयेंगे, पृष्ठ 72
5 वही, जीवन तीन स्थितियाँ, पृष्ठ 29
6 तरुण–काव्य ग्रन्थावली' सभी का है, पृष्ठ 96

जीवन में मन, वचन और कर्म के समन्वय को वह आवश्यक मानते है। उन्हें विश्वास है कि ऐसा करने पर पुरुष का पौरुष, दृढ संकल्प और कर्मठता उसको सृष्टि का सिरमौर बना सकते हैं, ऐसी स्थिति मे प्रकृति की सम्पूर्ण शक्तियॉ उसकी दासी बन जाती है–

"तेरी ही भौंहो के इंगित–
बिजली बन होते प्रतिबिम्बित,
पर्वत को ढुकराने वाले! मार व्यथा का ढोते क्यों हैं।" [1]

'ऑधी और चॉदनी' के कवि को कभी–कभी लगता है कि चॉदनी ऑधी में फॅस गई है, उसके गीतों को लू लग गई है और अब वह जीवन भर गा न सकेगा, पर शीघ्र ही वह इस नैराश्य–अन्धकार को भेद आलोक के दर्शन करता है और पुकार उठता है–

"न जी अरे घुटा–घुटा, गला–गला
मनुष्य है मनुष्य हाय, तू भला,
निहार मेघ बीच दृप्त चंचला,
मरोड़ तोड़ फेंक लौह–शृंखला,
अरे अथाह पी प्रकाश–माधुरी,
असीम मुक्ति बीच लहलहा यहाँ!
मुझे बुला रहा गगन कि आ यहाँ!" [2]

कवि की प्रबल जिजीविषा उसे पराजय स्वीकार नही करने देती, मृत्यु–भय उसे आतकित नहीं करता, मार्ग की बाधाएँ उसकी गति अवरुद्ध नही कर पाती। वह फेफडो में हिमालय का पवन भर, आकाश की नीलिमा पी, मुर्झाए जीवन को पल्लवित करना चाहता है, मौत के जबडे पकड जिन्दगी का अर्क पीने का अभिलाषी है।

"पर अन्ततः उनकी आस्था, आत्म–विश्वास, मानव–चेतना की उज्ज्वल आभा में अडिग विश्वास उन्हें ऐसी शक्ति प्रदान करते हैं, जिससे वह दैन्य, अवसाद, पीड़ा और निराशा की छाती पर सीधा पाँव टेककर खड़े हो जाते हैं, आग उगलते ज्वालामुखी को अपने हाथों से मूँदने की तत्परता दिखाते हैं और अन्धकारपूर्ण सागर के पार नवचेतना का आलोक देखते हैं। साराँश यह है कि 'तरुण' जीवन रस के आस्थावान कवि हैं।" [1] –ये उदगार है डॉ0 शान्तिस्वरूप गुप्त के।

वैष्णव सस्कारो मे पले 'तरुण' के अनेक गीतो मे ईश्वर के प्रति आस्था, आस्तिकता, साध्यात्म एव भक्ति भावना के स्वर गूजते सुनाई देते है कभी वह वैष्णव भक्तो के सदृश आत्म–ग्लानि से भर उठता है और भगवान् से प्रार्थना करता है कि वह अपना वरद सत्य सिद्ध करते हुए इस जगत् के पाप–ताप से सतप्त प्राणियो के क्लेश दूर करे–

"पाप–ताप से झुलस रहे हैं
हम प्राणी निरुपाय निरन्तर
प्रभु त्रिताप की शान्ति करो–
निज करुणा–कादिम्बिनी बरसा कर।" [3]

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'लौह–पुरुष, तू रोता क्यो है', पृष्ठ 95
2 'ऑधी और चॉदनी' 'आकाश का निमन्त्रण', पृष्ठ
3 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'वन्दना', पृष्ठ 271

वह परम प्रभु से प्रार्थना करता है कि वह प्राणियो के छल, भय, भ्रम, सशय नष्ट कर मानव–मन में प्रेम–भाव अंकुरित करें और उन्हें अपनी शरण में ले अभय दान दे। भक्ति–काल के भक्त–कवियों के समान वह भव–सागर का रूपक बॉधकर प्रभु से पुकार करता है कि वह उसकी जीवन–नौका को भव–सागर से पार लगा दे–

"अँधकार कुछ नहीं सूझता, लुप्त हुआ हा, कूल।
जलचर हिंस, विकंपित तरणी, झंझा भी प्रतिकूल!
पहुँचाओ उज्ज्वल प्रकाश की–एक किरण, हे नाथ!
दौड़ों! दौड़ो!! पकड़ो मेरे, कंपित दुर्बल हाथ।" [1]

नैराश्य की मन स्थिति मे वह परम–तत्व की क्रोड मे समा जाना चाहता है–

"जी करता है एक रागिनी गाऊँ ऐसी व्यथा–भरी,
बरस पड़े नयनों का वैभव हो उर बरसे बादल–सा!
बिलख किसी आंचल से लग कर दो क्षण हल्का हो जाऊँ,
और थके बालक–सा जी–भर धैर्य छोड़कर रो पाऊँ!" [2]

उपनिषदो की विचारधारा से प्रभावित कवि ईश्वर से प्रार्थना करता है कि वह उसे पाप–अज्ञान के अन्धकार से ज्ञान–लोक की ओर ले चले–

"अंधकार से हमें ले चलो
नव प्रकाश–पथ पर हे ईश्वर!
कलुषित मन शुचि ज्ञान–ज्योति से
करो प्रकाशित, हे अजरामर!
अमर सत्य की अन्धकार पर
हमें दिखाओं, पूर्ण विजय, है।" [3]

इन पंक्तियो को पढते समय 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' का ध्यान सहज की आ जाता है। 'खोज' कविता में भी वह चिर–प्रकाश की अमर–किरण खोजता है, जिसकी आभा का स्पर्श पा मानस का बंधन खुल जाता है, जीवन का तम घुल जाता है और मरण–मुख दमक उठता है–

"जिसके प्रकाश में मानस का
कटुतम बंधन सब खुल जावे,
जिसकी स्वर्णिक स्वर्णाभा से
जीवन का सब तम घुल जावे,
जिसकी आभा पा दमक उठे
छवि–हीन मरण–मुख भी श्यामल–
मैं खोज रहा धरती पर–
वह चिर–प्रकाश की अमर किरण!" [4]

कवि में मोक्ष की कामना तो है, वह मुक्ति–गान भी लिखता है। वह आधुनिक कवियो पन्त, प्रसाद आदि के समान

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'पुकार', पृष्ठ 63
2 वही, 'एकान्त क्षणो में', पृष्ठ 147
3 वही, 'वन्दना', पृष्ठ 270
4 वही, 'खोज', पृष्ठ 255

कर्म मे विश्वास करता हूँ, मधुर–मुक्ति को बन्धन मानता है और प्रकृति से समरस होना ही आत्म–मोक्ष बतलाता है–

"ताजे फूलों की गन्ध–सनी,
सुकुमार हवाओं में चिकनी,
मैं काया को लहरा अपनी–
यदि दूर क्षितिज के सिन्दूरी,
झरनों से रस भर लाया–तो
जानूँगा, पिंजरा अब टूटा।" [1]

आध्यात्म चिन्तन की दृष्टि से 'तरुण' भी साधना–पथ पर बढते हुए शत–शत बाधाओं को चुनौती देते हैं। वह जानते हैं कि यह पथ कण्टकाकीर्ण भी है। और लम्बा भी, पर यदि साधक मे प्रखर आत्म–ज्योति है, साध्य में अटूट विश्वास है, व्रत को पूरा करने की लगन है, तो वह निरन्तर बढता चलेगा–

"साधना का देश है यह, हैं यहाँ अनिवार्य जलना,
कंटकों के मार्ग पर पड़ता यहा अविराम चलना,
दर्द का उपचार कोई भी नहीं प्यारे, यहाँ पर,
'अनवरत बढ़ना' नियम यह है, न टलता, है न टलना;
चूर्ण होकर भी सखे, तू पूर्ण कर अपना महाव्रत!" [2]

'जीवन' शीर्षक कविता 'तरुण' का उद्देश्य स्पष्ट करती है–

"ले पुण्य प्रकाशामृत–पूरित
अपनी आत्मा की ज्योति मधुर–
विश्वात्मा में लय होने का
यह जीवन है सुन्दर अवसर!" [3]

'सुख–दुख' कविता में यही जीवन–मूल्य स्पष्ट किया है–

"जीवन तो है मधुमय शतदल
जग की पुष्करिणी में सुन्दर,
प्रभु का प्रकाश पाकर खिलता
देने जग को रँग–रूप अमर!" [4]

'तरुण' आस्थावान है, आध्यात्मिक जीवन का पोषक है। लेकिन तमाम सांसारिक कष्टों के बावजूद वह साहस, हिम्मत और आशा का अमृत प्रदान करते हुए कहता है–

"हम सब ईश्वर के बच्चे है; ले–ले कर दृग में निज सपने–
जीवन में अस्थिर बालू पर रच रहे घरौंदे हम अपने!
हम खेल रहे हैं लहरों से, निर्बाध, मरण–सागर–तट पर,
हम सृष्टि–मुकुट हैं–मानव हैं, मानें न पराजय, जायें मर!" [5]

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'मुक्ति–गान', पृष्ठ 276
2 वही, 'साधना–पथ पर', पृष्ठ 259
3 वही, 'जीवन', पृष्ठ 108
4 वही, 'सुख–दुख', पृष्ठ 116
5 वही, 'खेल', पृष्ठ 132

'शक्ति का सौन्दर्य–स्वप्न' कविता मे समुद्र के वैभवशाली स्वरूप का वर्णन करते हुए कवि अपने व्यक्तित्त्व में भी समुद्र के गुणो को आत्मसात् करने का आकाक्षी है। प्रसाद के समान उन्हे भी सागर अपनी उत्तुंग तरगों द्वारा उस परम सत्ता का स्तवन कराता प्रतीत होता है–

"किस शक्तिनाथ की सत्ता का गाते हो शाश्वत विजय–गान,
किस चिर–रहस्य की प्रतिमा का करते उद्‌घाटन, शक्तिनाथ।" [1]

वह इस ईश–कृपा को पाकर अज्ञान–तिमिर मिटाने और प्रकाश–विकीर्ण करने के लिए कृत–सकल्प है–

"सूरज, चाँद, सितारों पर तो मुझे नहीं विश्वास है,
क्योंकि उजाले का यह उद्‌गम कालतिमिर का ग्रास है;
पंथ सुझावे, और राह के रोड़े कर दे भस्म जो–
ऐसी एक अमर ज्वाला है, जो मेरे ही पास है!" [2]

कवि की यह आस्था मध्यकालीन भक्त–कवियो के सदृश है जो मानते थे कि करुणा–वत्सल भगवान् सुदामा, द्रौपदी, गज आदि की पुकार पर नंगे पैरों दौड़ पड़े थे। इसीलिए 'अनुग्रह' कविता में वह आभार प्रकट करता है कि ईश्वर ने अन्तर्ज्वाला में तपा कर उसकी मिट्‌टी की काया को कंचन और मन को पूजा की माला का सुमन बना दिया है।–

"अन्तर्ज्वाला में तपा–तपा,
मुझको प्रति–पल, हे जीवन–धन,
मिट्‌टी की मेरी काया को,
तुमने यों कर दी है कंचन–
यह प्यार तुम्हारा है कितना!" [3]

तथा 'उसकी जय हो' गीत में कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहता है कि उसी ने भावों के बोल तथा अमोल गीत देकर तथा अन्तर–पट खोल कर उसके जीवन को सार्थक बनाया है–

"जिसने भावों के बोल दिया,
ये गीत मुझे अनमोल दिये,
मेरे अन्तर–पट खोल दिये, उसकी जय हो, उसकी जय हो।" [4]

"किशोरावस्था में ही गीता और उपनिषदों के विचारों में अवगाहन करने वाले तथा वैष्णव संस्कारों में पले 'तरुण' के लिए स्वाभाविक था कि उनके काव्य में आध्यात्म, भक्ति और दर्शन के स्वर मुखरित हो उठते, परन्तु भक्ति और आध्यात्मिकता प्रयत्न–साध्य नहीं है, उसके पीछे चिन्तन और बौद्धिकता नहीं है, वह सहज–स्वाभाविक है, निश्छल, आस्थामय हृदय के उद्‌गारों का प्रतिफल है। उन्होंने बाद में मानवतावाद से प्रभावित हो दुःखी एवं उत्पीड़ित जनों की सेवा में ही प्रभु–भक्ति मानकर अपने काव्य को मानवतावादी बना लिया है।" [2]

'मेरा अस्तित्व' कविता में तो कवि स्वयं समाधिस्थ–सा हो गया है। ऐसा लगता है कि या तो उसने परमसत्ता के साथ एकात्म होने का अनुभव प्राप्त कर लिया गया है अथवा उसे अपने भीतर ही परमात्मा का अस्तित्व प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा है।

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'शक्ति का सौन्दर्य–स्वप्न', पृष्ठ 203
2 'आँधी और चाँदनी' 'मुक्तक', पृष्ठ 91
3 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'अनुग्रह', पृष्ठ 64
4 वही, 'उसकी जय हो', पृष्ठ 59

"अनुराग–लालिमा से अपनी,
जल–थल–अम्बर में रहा लीप,
मैं निखिल विश्व के आंगन में
जल रहा चिरन्तन अमर दीप।
मुझ से आलोकित है कण–कण!" [1]

कवि ने अपनी संवेदना के धरातल पर परमसता से एकात्म स्थापित करके यह अनुभव प्राप्त कर लिया है कि वह उससे भिन्न नही है। 'अनुभूति' शीर्षक कविता में कवि प्रभु की इस विराट सृष्टि को देखकर विस्मय–विमुग्ध होता है। जो ईश्वर इस चर–अचर सृष्टि में विश्व–प्राण बन कर डोल रहा है, सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी, आकाश, सागर आदि जिस त्रिभुवनपति की महिमा का दिन–रात निरन्तर यशोगान कर रहे हैं–उस पर ब्रह्म का दो क्षण के लिए, अपना दम्भ त्याग कर रोमांचित तन–मन से चिन्तन नहीं किया और न ही याचक बनकर अपनी झोली फैला, उससे कुछ मॉगा तो कवि को अपना जीवन दरिद्रतापूर्ण ही लगता है–

"जिस त्रिभुवनपति की महिमा का यशोगान गा रहे निरन्तर–
ज्योतिर्मय के सूर्य, चन्द्रमा युग–युग से दिन–रात भ्रमण कर,
गहन नील इस महाशून्य में गूँज रहा जिसका शाश्वत स्वर,
विश्व–प्राण बन डोल रहा है मधुर पवन में जो अजरामर'– [2]

'कौन' शीर्षक कविता मे भी कवि उस अदृश्य शक्ति के प्रति विशेष आकर्षित होता है, जो कि इस अनन्त नीले आकाश, चमकती धूप, मखमली हरियाली, मधुर–शीतल जल से पूर्ण सरिताओं, विस्तृत मैदानों के सम्मुख लेटी हुई–सी नीली गिरिमालाओं तथा मौन भाव से खड़े तरुवरों की शोभा–सुषमा का आदि–स्रोत है। कवि उसी अदृश्य सत्ता को देखने के लिए रोमांचित हो उठता है–

"गहरा नीला आकाश! चमकती धूप! मखमली हरियाली!
हैं पवन–झकोरे मधुर–मधुर, सरिता–लहराते जल वाली!
विस्तृत मैदानों के आगे लेटी नीली गिरिमालाएँ!
हैं मौन खड़े भावुक तरुवर, स्नेहाकुल फैला शाखाएँ!
मैं देख रहा इस शोभा को, विस्मय विमुग्ध–सा हुआ मौन!
रोमांच हो रहा है रे मुझको– इस सुन्दरता का स्रोत कौन! [3]

'यह चॉद जिधर से आता है' नामक कविता में कवि किसी अदृश्य लोक की सुषमा, शोभा के प्रति आकर्षित होकर भाव–विभोर होता दिखाई पडता है। जिस दिशा से यह चन्द्रमा प्रतिदिन आता है, वहॉ अवश्य ही अँगूरी–मादक रस का सागर ठाठें मार रहा होगा। वहॉ तारक–कुंजों की गली–गली में प्रेम भरी मुरली बजती होगी, जिसका स्वर यहॉ कोकिल के कण्ठ में बज उठता है। उस अदृश्य लोक मे जो मदिरा ढुलकती है, कदाचित् वही यहॉ पर उषा बनकर छलक पडती हैं और उसी को अपने प्राणों में संचित करके कवि गा उठता है–

"जो मदिरा वहाँ ढुलकती है–
उषा बन यहाँ छलकती है!
प्राणों में जिसको संचित कर, कवि गाता, रस बरसाता है।" [4]

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'मेरा अस्तित्व', पृष्ठ 253
2 वही, 'अनुभूति', पृष्ठ 257–258
3 वही, 'कौन', पृष्ठ 266
4 'आँधी और चाँदनी' . 'यह चाँद जिधर से आता है', पृष्ठ 123

कविवर 'तरुण' ने ईश्वर की भक्ति–प्रणति, वंदन–अर्चन के रूप में अनेक गीत और पद भी लिखे है। इन भक्ति–गीतों और पदों में एक सच्चे भक्त–हृदय की रागात्मकता तथा प्रकृत कवि के अन्तर्मन का परिष्कृत रूप देखने को मिलता है। 'तरुण' ने ईश्वर के प्रति अपने प्रेम, विश्वास एवं दृढ़ आस्था तथा स्वस्थ आस्तिकता को अत्यन्त निश्छल तथा निर्विकार हृदय से पूर्ण समर्पण के साथ सरल भाषा में अभिव्यक्त किया है। ये भक्ति–गीत और पद मध्यकाल के भक्त कवियों की भक्ति–रचनाओं की भाँति अनुभूति प्रधान होने के कारण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। इन गीतो में 'चलो मन, हरि–चरणों की ओर', 'नौका डूबी जाता हमारी', 'तुम सुन लो मेरे प्राण–पिया', 'हरि–चरणामृत पी ले, मनवा', 'हरि आयेगे', 'जन्म–जन्म में मुझको' आदि विशेष उल्लेखनीय है।

इन गीतों में सूर, तुलसी के काव्य के रस का सहज स्मरण स्वाभाविक ही है। 'तरुण' का चित्रण गंभीर भक्ति–भाव की अनुभूति, स्वर और संगीत में आकण्ठ डुबो देता है। 'पूजा' शीर्षक कविता में भक्त अपने आराध्य से मिलने को आतुर है। भक्त की अभिलाषा, कोमल वेदना व दर्द का चित्रण बडे मार्मिक शब्दों में किया है–

"मैं पूजा करने आई हूँ।
अपने लघु सीमित अन्तर में मैं असीम को भर लाई हूँ।
प्रिय–दर्शन के धूपायन में
अभिलाषा का धूप जला कर
नयन कोर पर विमल अश्रु का
सुरभित मंगल दीप जला कर
सजा आरती ले आई हूँ।" [1]

'क्या उपहार तुम्हे दू, रानी!' मे कवि अपने आराध्य को कुछ श्रेष्ठ और अनश्वर भेंट चढाना चाहता है, किन्तु उसकी मानवीय सीमाएँ कितनी बाधक है–

"मणि, माणिक मिट्टी से निकले
मोती तो हैं खारे जल के।
आह! अनश्वर प्रिय को क्या दूँ! नश्वर जग की वस्तु, पुरानी!" [2]

भक्त कवि का आराध्य चिर–सुन्दर है। उसकी मधुर झाँकी सर्वत्र देखता है–

"यह महाशून्य आनन्द–भरा–
(रस इसमें कितना भरा, हरा!)
होता न तना यदि;–वसुन्धरा
पर कौन कमी रहता जीवित!" [3]

ईश्वर की कृपा पाकर कवि अपने को धन्य मानता है। 'चितवन–पथ मे' शीर्षक कविता में 'तरुण' लिखते है–

"अरुण तुम्हारे चितवन–पथ के
पड़ कर, प्राण! किसी दिन सहसा–
लघु रज–कण से हुआ बदल कर
मैं भी आभावान्– कनक–सा!" [4]

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'पूजा', पृष्ठ 347
2 वही, 'क्या उपहार तुम्हे दू, रानी', पृष्ठ 361.
3 वही, 'चिर सुन्दर', पृष्ठ 368
4 वही, 'चितवन पथ मे', पृष्ठ 281

कवि उच्चतम जीवन–आदर्शों का विशेष अनुरागी है। वह इस संसार में सौन्दर्य, प्रेम, सुख–शान्ति तथा अमर स्वर्गिक प्रकाश की ज्योति आदि सूक्ष्म उच्च जीवनादर्शों की खोज मे ली है। करुणा, स्नेह, त्याग तथा सेवा जैसे उच्चतम जीवनादर्श श्रेष्ठ मानव–जीवन के लिए अनिवार्य है। कवि का दृढ विश्वास हे कि इन जीवन–आदर्शों को अपने जीवन मे ग्रहण करने पर मनुष्य को इस धरती पर ही दुर्लभ मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कविवर 'तरुण' के काव्य में अभिव्यक्त आध्यात्मिक चिन्तन का फलक अत्यन्त व्यापक और विशद है। ईश्वर के साथ अनुभूति के स्तर पर एकात्म स्थापित करके कवि समाधिस्थ–सा होकर अपनी रचनाओं में प्रेम के इस स्वरूप की पराकाष्ठा तक पहुँचा है। अनेक रचनाओं में किसी अदृश्य शक्ति के प्रति कवि का गहन आकर्षण तथा उसे देखने की ललक–तडप उसके काव्य को रहस्यात्मक भाव–भूमि प्रदान करती है। उसके भक्ति–गीतों और पदों में एक सच्चे ईश्वर–अनुरागी भक्त–हृदय की रागात्मकता तथा अन्तर्मन के परिष्कार का उत्कृष्ट स्वरूप दिखाई पडता है। आध्यात्मिक चिन्तन 'तरुण' के काव्य को एक विस्तृत आयाम तथा सुदृढ आधार प्रदान करता है।

कवि 'तरुण' की दृष्टि मे आत्म–स्वातन्त्र्य की चेतना, जीवनोत्साह, मानव–जीवन के मूल सौन्दर्य का दर्शन, सास्कृतिक आस्था, मानव की करुणा, त्याग और समर्पण की प्रेरणा आदि मूल्यो की सघनता–समग्रता में ही सच्चा आध्यात्म निहित है। उन सांस्कृतिक मूल्यों के अभ्यास से प्राप्त तृप्ति ही कवि 'तरुण' का चिरकाम्य मोक्ष या जीवन–मुक्ति है। यही उनका जीवन–दर्शन है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 डॉ0 शान्तिस्वरूप गुप्त 'डॉ0 'तरुण' दृष्टि और सृष्टि', पृष्ठ 135
2 डॉ0 शान्तिस्वरूप गुप्त 'डॉ0 'तरुण' दृष्टि और सृष्टि', पृष्ठ 127